P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-4* ISSUE-2* May (Part-1)- 2019
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

नरेश मेहता जी के काव्य में भाषा एवं शिल्पगत वैशिष्ट्य

शशि बाला रावत पंवार
असिस्टेंट प्रोफेसर,
हिन्दी विभाग,
राजकीय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय,
अगस्त्यमुनि, उत्तराखण्ड,
भारत

सारांश

कवि धर्म की सबसे बडी कसौटी भाषा है। काव्य में अभिव्यंजना,सामान्य अभिव्यक्ति के क्षेत्र में हटकर एक विशिष्ट शैली का रूप धारण कर लेती है। परन्तु कवि भाषा के प्रति उतना ही सहज और निष्ठावान होता है। परन्तु कवि भाषा के प्रति अत् भाषा में प्रेषणीयता के साथ–साथ सौन्दर्य तथा प्रभाव उत्पन्न करने की ओर भी कविता का विशेष प्रभाव रहता है। नरेश मेहता जी ने कहा है कि प्रायः भाषा के स्तर पर ही अधिकांश कवि काव्य श्रोता एवं पाठक काव्यात्मकता की तलाश में रहते हैं। भाषा का संस्कारित होना अनिवार्य प्रक्रिया है उन्नत मन स्थिति को अनुन्नत भाषा अभिव्यक्त नहीं कर सकती है। शब्दों के नये अर्थ से तात्पर्य नयी अर्थ भाव–भंगिमा से है। कि प्राचीन शब्दों को भी सर्वथा नया अर्थ मर्म के साथ प्रयुक्त में से होकर सामने आती है। तभी उसमें कलात्मक जीवान्तता आ सकती है।

मुख्य शब्द : नरेश मेहता–भाषा, काव्य,शिल्पगत वैशिष्ट्स, भाषागत विशिष्टताएँ।

प्रस्तावना

जब काव्य का रचीयता और उसके श्रोता पाठक शब्द और अर्थ की सीमा का अतिक्रमण करके उस आनन्द भूमि पर पहुँच जाता है। इस प्रकार नरेश मेहता जी भाषा के व्यावहारिक,अर्थगर्भिता और विशिष्ट प्रयोग के पक्षधर माने जाते है।

नयी कविता के इतिहास में जब–जब भाषा की चर्चा होती है। तब–तब नरेश मेहता जी को याद किया जाता है। अपनी भाषा शैली और शिल्प–सौष्ठव का निर्माण करने में नरेश मेहता जी ने विशेष श्रम किया है। परन्तु परवर्ती कविताओं में उसकी प्रयोगवृत्ति ने रूझान–वश भाषा के प्रचलित रूप को अनपेक्षित ढग से बदलने का प्रयत्न किया है। नरेश मेहता जी की भाषा विचित्रता के प्रति विरोध है। उनकी काव्य रचना अनेकत्र ऐसी होती है। जो हिन्दी की वाक्य रचना की सामान्य प्रकृति से भिन्न होती है। क्रियाओं के प्रयोग में महता जी ने पूरी अराजकता से काम लिया है। उनका कहना था–भाषा का आमूल परिवर्तन नही हो सकता है उनके काव्य में बॅगला की शब्दावली भी देखी जाती है उनके काव्य में बॅगला का प्रभाव दर्शनीय है–

''प्रभु मोर कंठ के
बल देवो, धोष देवो, न्याय देवो''
एक दिन निश्चित करिबे
जनता का भिनसारा।''

इस कविता में बॅगला की अत्यधिक शब्दावली के कारण भाव को समझने में कठिनाई होती है। मेहता जी की भाषा की विशिष्टता के रूप में प्रयुक्त सूक्तियों को भी विस्तृत नहीं किया जा सकता है। इनके प्रयोग से भाषा के आर्कषण में वृद्वि हो गई है। यथा–

1. युद्व एक ऐतिहासिक फेन है।'' (संशय की एक रात'') (पृ0 69)
2. ''मनुष्य चल सके इसलिए तो अंधकार में सूर्य चल रहा है'' (समय देवता'', पृ0122)
3. ''परिस्थितियॉ धनेड् है। दुहो इनको निष्ठुर ऊॅगलियों से दुहों।'' (संशय की एक रात, पृ0 46)
4. ''व्यक्ति से बडा होता है उसका दुख'' (संशय की एक रात, पृ062)

अतः मेहता जी की दृष्टि अपने प्राचीन ग्रन्थों के प्रतिपाद्य को ज्यों की त्यों अन्धस्वीकृति प्रदान करने वाली नहीं है। मेहता जी की सर्वोल्लेख विशिष्टता उनकी उदारता है। मेहता जी की काव्य–यात्रा क्रमश भूमि तक पहुॅचाने की एक अनथक तपश्चर्या है।

जहॉ पहुॅचकर स्रष्टा का यह कल्याणकारी महाभाव अपने में गहरे उदरता हुआ अनुभव होता है। मेहता जी की कवितायें जिस उदात्त भूमि पर अवस्थित होकर रची गई है। वह सहज प्राप्य नहीं है। कवि को कहीं धूप की ब्राह्राणी ''उपनिषद'' के रूप में दिखाई पडती है। जिस बोध से वृक्ष मेहता जी के चेतन को मण्डित करता है। वह अपने आप में एकदम विशिष्ट है।

''अपने में से फूल को जन्म देना,
कितना उदात्त होता है
यह केवल वृक्ष जानता है।,और फल
वह तो जन्म–जन्मांतरों के पुण्यों का फल है।''

मेहता जी व्यष्टि और समष्टि के संमुलित संबंध को स्वीकार करते है। वह ऐसी सामाजिकता का विरोध करते है, कवि का एकांत बोध सामाजिक प्रयोजन रखता है,क्योंकि उसकी प्रार्थना होती है। कि उसे एकांत मिले,जिसमें वह सारे संसार की कथा लिख सके, वह जनता की वकालन करना हुआ, अन्याय के अॅधेरे में सूझकर नया सवेरा लाने के लिए रक्त से गान लिखने की तैयारी करता है। क्योंकि कोटि–जन, पूॅजी–रथ पिस जाते है।

''हमी स्मरणीय नहीं''

हमी वरणीय नहीं, अन्याय अन्धारे हमी, लघु ध्रुवतारा
तार–तार वेषे हमी
लडी जावे युग पथे
एक दिन निश्चित करिवे /जनता के भिनसारा
बस प्रभु रक्त से लिखी जाई
गान जन गाई।।''

मेहता जी युगीन–उत्पीडन, दैन्य और धोर व्यक्तिवादिता पर व्यंग्यपरक दृष्टि डालते हुए व्यक्ति के खोखलेपन को उजागर करते है। ''यदि मैं मेयर होता''। अत् मेहता जी की रचना इस तथ्य को उजागर करती है। कि नगर को घर जैसा सुविधासम्पन्न एवं स्वच्छ बनाने की बात अत्यन्त क्षणिक रूप में मन में उठती है। किन्तु निजी स्वार्थो के उदय होते ही लुप्त हो जाती है।नरेश मेहता जी के काव्य का प्रमुख अंश मानवतावाद की भावनाओं से परिपूर्ण है। मेहता जी ने पूरी आस्था के साथ मनुष्य को पहचाना है। उसके मानवीय संबंधो को स्वीकारा है और तत्पश्चात् लोक–मंगल और सांस्कृतिक संदर्भो में अपने मानवताद को प्रस्तुत किया है।

निष्कर्ष

मेहता जी का काव्य फलक नितान्त विस्तृत है। प्रकृति, प्रेम, संस्कृति आदि मेहता जी के प्रिय धरातल हैं, जहॉ से भावों की सम्पदा ग्रहण की गई है भावों की विविधता देखते हुए प्रभाकर श्रोत्रिय जी ने कहा है कि अनुभूति के स्तर पर भी कवि की मधुकरी वृति देखी जा सकती है। नरेश मेहता जी की आरंभिक कवितायें छायावादी एवं रहस्यवादी ढंग की थी किन्तु आगे चलकर उन्होने उसे कविता कहने से इनकार कर दिया। मेहता जी ने स्वीकार किया है कि नया तो मेरा युग है, मेरी प्रकृति है। तथा सबसे नया में हूॅ। उनकी कविता में एक ओर भावनात्मक सौन्दर्य है तो दूसरी ओर अभिनव शिल्प है। प्रकृति, प्रेम, सौन्दर्य, धर्म–संस्कृति युद्व और शांति, मानवतावाद व आधुनिक बोध नयी जीवन–दृष्टि मेहता जी के काव्य में प्रचुरता से पाए जाते हैं।

मेहता जी की दृष्टि प्रकृति के उदात्त रूप पर टीकी हुई है। जहॉ कोई प्रतिस्पर्द्वा नहीं है। केवल दान ही दान है। केवल कल्याण ही कल्याण है। प्राकृतिक उपादान एक उदात्त अनुभूति से सिंचित कर सके परन्तु धूप को, कृष्णा रूप में देख पाना निश्चित ही एक संस्कार की मॉग करता है कवि प्रकृति से प्रश्न कर लेता है–

''इस कोमल गन्धार रूप को,
कभी अपने अंगो पर धारा है।
प्रतिदिन पीताम्बर यह
वैष्णवी
किसके अनुग्रह–सी
आकाश में देव वस्त्रों सी
अकलंक बनी रहती है।''

आकाश की अनन्तता से हम सब अभिभूत होते है। परन्तु ''आकाश'' को एक ''गायात्रिन'' तथा ''उषा'' और संध्या को उसकी गायत्रियों के रूप में देख पाना कवि नरेश मेहता जी की एक विशिष्टता है। प्रकृति को अपनी पूरी सांस्कृतिक अनुभूति का अभिभाज्य अंग बनाकर ग्रहण करना और उसे उसी में अभिव्यक्त कर देना नरेश मेहता जी की प्रकृति दृष्टि की सबसे केन्द्रीय प्रवृति है। अपने कवि–जीवन के आंरभिक काल में मेहता जी ने ''उषा'' के प्रति व्यक्त की थी, तथा उसके सौन्दर्य से अभिभूत हुए थे।

मेहता जी के काव्य में संस्कृति–बोध अनेक आयामों में विकेन्द्रिय हुआ है। उनकी कविताओं में अक्षत, चन्दन, रोली सिन्दुर, उषा, इन्द्र, दिकपाल, आदि में विकसित पति–पत्नियों के गति का उल्लेख उनकी सांस्कृतिक दृष्टि से परिचायक मेहता जी ने संशय की एक रात, महाप्रस्थान, प्रवाद–पर्व तथा शबरी में भारतीय संस्कृति के महत्वपूर्ण पक्ष को उभारा है, युद्ध पूरे संसार का अनिवार्य सत्य है। युद्ध के पीछे राज्य लिप्सा की ही भावना नहीं होती, बल्कि धर्म, न्याय एवं शांति की स्थापना के लिये भी युद्ध होते है। 'संशय की एक रात' मैं राम जिस समय लंका की ओर प्रस्थान करते है। उनके मन में भी यह प्रश्न उठता है। ''क्या युद्ध की एकमात्र रास्ता है। राम की यह शंका वस्तुतः कवि की शंका है। उसी का संशय है। राम यद्यवि परिषद के निर्णय को स्वीकार कर युद्ध करते है।

भारतीय संस्कृति का केन्द्रीय उत्स करूणा है। मेहता जी के राम इसी कल्पना की प्रतिभूर्ति हैं। राम के चरित्र मैं करूणा की अवतारणा बड़े मार्मिक स्तर पर हुई है। वह कहते है–

''समाहित व्यक्तित्व की,
यह ज्वाल,
अनुक्षण दाहती है।
कौन से वे हिम शिखर है,
दोणियाँ है,
जहाँ आदिम अग्नियाँ सोयी पड़ी हैं।
यह अग्नि भी सो जाये।

''महाप्रस्थान'' के भी अनेक स्थल महत्वपूर्ण या करूणपूर्ण उक्तियों से भरे पड़े है। युधिष्ठिर के व्यक्तितत्व में करूणा की पराकाष्ठ देखी जा सकती है। युधिष्ठिर के शब्दों में

''आज नहीं तो कल,
राजा नहीं अधिक कठोर हो जायेंगे,
ये राज्य
और सुदूर भविष्य में
राज्य से भी अधिक अमानवीय हो जायेगाी
ये राज्य–व्यवस्थाएँ।

इस सत्य का दर्शन हम आज के समाज में बड़ी आसानी से कर सकते हैं। आज व्यक्ति एवं उसकी समस्त मर्यादा–राज्य व्यवस्था के नीचे पदमर्दित है। इस प्रकार मेहता जी ने अपने अध्ययन काल में तथा बाद में भी काफी अध्ययन किया। लेखक बनने के क्रम में मुख्य रूप से उनकी तैयारी कवि के लिए थी, किन्तु ''डबते मस्तूल'' लिखने के बाद उन्हें लगा कि वह गद्य भी लिख सकते है। मेहता जी ने जब ''यह पथबन्धु था'' से लेखन में विश्वास किया तो तब से लगातार गद्य–पद्य दोनों लिख डाले।

संदर्भ ग्रंथ सूची

व्यक्तिगत बातचीत के आधार पर– नरेश मेहता सन्–1961–वाणी प्रकाशन नई दिल्ली।

नरेश मेहता यह पथबन्धु था पृ0 34,–नरेश मेहता : ''यह पथबंधु था'' पृ0 34–सन् 1962– पूर्वांचल प्रकाशन–नई दिल्ली।

नरेश मेहता धूमकेतु एक श्रुति, पृ0449, ''धूमकेतु एक श्रुति'' पृ0 123–1963– वाणी प्रकाशन–नई दिल्ली

डॉ रामकमल राय द्वारा दी गई जीवनी के आधार पर वाणी प्रकाशन–नई दिल्ली

नरेश मेहता : महाप्रस्थान–पृ0–25, सन् 1965 , इन्द्रविजय सिंह पूर्वांचल प्रकाशन नई दिल्ली,

नरेश मेहता : धूमकेतु एक श्रुति;, पृ0 123–1963– वाणी प्रकाशन–नई दिल्ली